डॉ. महेश दिवाकर जी की कविता में "माँ की पीड़ा" का विमर्श

एफ्. बी. नायकर*

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.21438913

ABSTRACT

डॉ. महेश दिवाकर रचित 'माँ की पीड़ा' कविता मातृत्व के असीम त्याग, समर्पण और वात्सल्य का सजीव चित्रण करती है। गर्भावस्था के नौ महीनों में माँ द्वारा सहे गए असहनीय शारीरिक और मानसिक कष्टों को इसमें अत्यंत मार्मिक रूप से दर्शाया गया है। ईश्वरीय आस्था और मनोबल के सहारे माँ प्रसव की दारुण पीड़ा सहन करती है। संतान के जन्म लेते ही वह अपने सारे दुख भूलकर उसे मंगलमय जीवन का आशीर्वाद देती है। मातृत्व की महिमा और निस्वार्थ प्रेम को गहराई से रेखांकित करते हुए, यह विश्लेषण माँ को ईश्वर के तुल्य स्थापित करता है, जिसका सर्वोच्च लक्ष्य केवल अपनी संतान का कल्याण है।

KEYWORDS: माँ की पीड़ा, मातृत्व और वात्सल्य, असीम त्याग, प्रसव वेदना, डॉ. महेश दिवाकर.

* **एफ. बी. नायकर,** सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, सरकारी प्रथम दर्जा महाविद्यालय, सवणूर, हावेरी.

प्रस्तावना

साहित्य समाज का दर्पण है, समाज के सुधार और प्रगति में पुरुष और स्त्री का योगदान बहुत है। इसके साथ-साथ हिन्दी के प्रमुख साहित्यकारों का योगदान भी बहुत है। इसमें आधुनिक कवि एवं साहित्यकार डॉ. महेश दिवाकर जी का योगदान भी है। "मातृ देवो भव:" लोकोक्ति के अनुसार माँ को हम भगवान के स्वरूप मानते हैं, और यह सत्य भी है। हर एक माँ के अंदर ममता, समानता, एकता, करुणामयी, त्यागमूर्ति और स्नेहमयी आदि श्रेष्ठतम गुण रहते हैं।

माँ को हम धरती के रूप में देखते हैं क्योंकि जैसे धरती सभी दर्द को सहन कर भी हँसती है और संयम भी रखती है। ऐसे ही माँ का दर्द सहना, बच्चे के ऊपर प्यार देना, लक्ष्मी, सरस्वती और पार्वती के रूप का दर्शन कराता है। कविवर डॉ. महेश दिवाकर जी ने "माँ की पीड़ा" इस कविता में माँ के त्याग, दर्द और आशा के बारे में अपना विचार व्यक्त किया है।

तुमको जन्म दिया तो मैंने, दारुण पीड़ा भोगी है!
तुम क्या जानो बच्चों! मेरी रग-रग कितनी रोगी है?

माँ कह रही है कि जब मैंने तुम्हें जन्म दिया, तब मैंने बहुत ही भयंकर और असहनीय दर्द सहा है। प्रसव की पीड़ा को यहाँ 'दारुण पीड़ा' कहा गया है। माँ बच्चों से पूछ रही है कि तुम क्या समझोगे कि मेरा शरीर कितना बीमार और कमज़ोर हो गया है। 'रग-रग रोगी' उसका पूरा शरीर, नस-नस दर्द और बीमारी से भरी हुई है, तुम्हें जन्म देते समय मैंने असहनीय प्रसव पीड़ा सही। यह दर्द तुम्हारे लिए ही सहा। जो बच्चों को पालने और उनके लिए किए गए त्याग का नतीजा है। माँ के त्याग और ममता को दिखाया गया है। माँ बच्चे को जन्म देते समय और बाद में उसे पालते समय जो शारीरिक कष्ट और तकलीफ़ें झेलती है, बच्चे अक्सर उसे समझ नहीं पाते। यह कविता माँ के उस अनकहे दर्द और समर्पण की तरफ इशारा करती है जिसे संतान को महसूस करना चाहिए।

नौ महीने तक तुम्हें अपने गर्भ में रखा। उस दौरान अपनी भूख-प्यास भूल गई। उल्टी, घबराहट और बेचैनी में मेरी साँसें उल्टी-सीधी चलती थीं। रात-दिन जीना बहुत मुश्किल था। दिन तो जैसे-तैसे कट जाता था, पर रातें काटना भारी पड़ता था। आँखों से आँसू छलकते रहते थे। फिर भी तुम्हारे जन्म की आशा में मेरी पलकें भारी होने के बाद भी खुली रहती थीं, मैं सो नहीं पाती थी। फिर भी माँ इष्टदेव पर भरोसा रखती है।

दिया मनोबल इष्टदेव ने, दुर्गा माँ का अवलम्बन!
अन्तर्यामी सभी जानते, प्रणय-भक्ति का अनुबंधन।।

मेरे इष्टदेव और माँ दुर्गा ने मुझे हिम्मत दी, उनका सहारा मिला। ईश्वर सब जानते हैं कि यह प्रेम और भक्ति का रिश्ता है। माँ का प्यार एक तरह की भक्ति ही है। और राम की कृपा से मेरे मन की इच्छा, यानी तुम्हारा जन्म, पूरा

हुआ। जब प्यार ने तुम्हारा मूर्त रूप लिया, यानी जब तुम पैदा हुए, तब मेरे शरीर की दशा ही बदल गई। सारी पीड़ा तुम्हें देखकर भूल गई। तुम्हारे आने के बाद सबकुछ बदल गया। जब तुम हमारे गर्भ में आए तो पूरे घर-आँगन में खुशियाँ छा गईं। दुनिया बदली-बदली सी लगी, लगा कि अब अच्छे दिन आ गए हैं। बच्चे के आने की खबर से घर में उत्सव का माहौल हो गया।

सभी रिश्तेदार बहुत खुश रहते थे। घर एक पवित्र तीर्थ-स्थान जैसा लगने लगा था। घर में भागवत कथा और रामायण का सुंदर पाठ होने लगा। बच्चे का जन्म शुभ माना जाता है। घर में चारों तरफ खुशी ही खुशी थी और मैं सबका सहारा बनी। अपना दर्द और तकलीफ़ मुस्कुराकर सह लेती थी, मैंने अपनी पीड़ा को कभी गिना ही नहीं। माँ अपने कष्ट को भूलकर परिवार की खुशी में खुश रहती है।

महा लक्ष्य जब रहे सामने, पीड़ा भी सह लेता मन!
अरुण प्रात लेकर आयेगा, निशा-गरल पी लेता तन।।

जब सामने कोई बड़ा लक्ष्य हो, यानी बच्चे का जीवन, तो मन हर पीड़ा सह लेता है। जैसे रात का अंधेरा ज़हर पीकर भी सुबह की लालिमा ले आती है, वैसे ही माँ का शरीर रात-भर का कष्ट सहकर बच्चे के लिए नई सुबह लाता है। रातें पहाड़ जैसी लंबी और भारी लगती थीं, और दिन समुंदर जैसे अंतहीन लगते थे। कभी आशा बंधती थी तो कभी निराशा घेर लेती थी। दोनों मिलकर मन को बार-बार छलती थीं। यह प्रसव के बाद के समय की मानसिक और शारीरिक स्थिति को दिखाता है।

सब कुछ पूर्व नियोजित करता, जन्म-मृत्यु का वह स्वामी!
भला-बुरा सब देख रहा है, कण-कण में अन्तर्यामी।।

माँ को विश्वास है कि जन्म और मृत्यु सब कुछ ईश्वर के हाथ में है। वही सब पहले से तय करता है। वह ईश्वर भला-बुरा सब देख रहा है, वह हर कण में मौजूद है और सबके मन की बात जानता है। ईश्वर हमेशा भक्ति और सच्चे प्रेम के वश में रहता है। अगर उसे निश्छल यानी साफ मन से पुकारो, तो वह तुम्हारी सारी पीड़ा खुद सह लेता है। माँ ने अपनी प्रसव पीड़ा ईश्वर के भरोसे ही सही। फिर एक दिन सुबह के समय, हमारे पुण्य का उदय हुआ। धरती पर तुम्हारा जन्म हुआ और लगा जैसे मेरे सारे सपने पूरे हो गए, फलित हो गए।

पुत्र-रत्न को रही देखती, फूले नहीं समायी मैं!
सारी पीड़ा भूल गई थी, जितनी अब तक पाई मैं।।

जब मैंने अपने बेटे रूपी रत्न को देखा तो मेरी खुशी का ठिकाना न रहा, मैं फूली नहीं समाई। उस एक पल में मैंने अपनी सारी पीड़ा भुला दी, जितनी भी मैंने नौ महीने में सही थी। माँ अपने बच्चे को 'लाल' कहकर सौ-सौ बार आशीर्वाद देती है कि तुम खूब फूलो-फलो, जीवन में बढ़ो। माँ की तपस्या, उसका 'लक्ष्य-साधना', बच्चे के जन्म के साथ पूरी हो गई। वह आँखें बंद करके

ईश्वर को धन्यवाद देती है।

स्वस्थ रहो! सानंद सदा ही, जीवन में सब कुछ पाओ!
मनोकामना पूर्ण पुत्र हो, गीत राम के नित गाओ!!

माँ अपने बेटे को आशीर्वाद देती है: तुम हमेशा स्वस्थ रहो, सदा आनंद में रहो और जीवन में सब कुछ पाओ। तुम मेरी मनोकामना पूर्ण करने वाले पुत्र हो। हमेशा राम के गीत गाते रहो, यानी नेक और धार्मिक बने रहो।

निष्कर्ष:

"माँ की पीड़ा" कविता एक पूर्ण चक्र है। यह प्रसव की दारुण पीड़ा से शुरू होकर, नौ महीने के कष्ट, सामाजिक खुशी के बीच माँ के एकांत दुख, ईश्वर पर अटूट विश्वास, और अंत में 'पुत्र-रत्न' को पाकर सारी पीड़ा भूल जाने तक का सफर दिखाती है। अंतिम पंक्तियाँ बताती हैं कि माँ के लिए बच्चे का जन्म ही उसकी तपस्या का फल है। उसके बाद माँ की एक ही कामना रह जाती है: बच्चे का कल्याण। वह अपना सारा दर्द भूलकर सिर्फ आशीर्वाद देती है। इसलिए माँ को भगवान के रूप में देखा जाता है।

आधार ग्रंथ:

1. दिवाकर, डॉ. म. (२०२४). लोकधार -११. विश्व पुस्तक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. ४५०-४५३.